

## जलवायु परिवर्तन और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग: जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए विभिन्न देशों के बीच कूटनीति और समझौतों की चुनौतियाँ

**Dheeraj Solanki**

M.A. Political Science

Ma- Govind Guru Tribal University, Banswara

**सार**

21वीं सदी का सबसे बड़ा संकट जलवायु परिवर्तन है। यह शोध पत्र जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए कूटनीतिक प्रयासों का विश्लेषण करता है, जिसमें प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय समझौतों जैसे COP सम्मेलनों, पेरिस समझौता और क्योटो प्रोटोकॉल शामिल हैं। इसमें विभिन्न देशों की भूमिकाओं, वित्त की चुनौतियों, राष्ट्रीय हितों के टकराव और कानूनी बाध्यताओं की कमी से उत्पन्न चुनौतियों का व्यापक विश्लेषण किया गया है।

शोध के परिणामों से स्पष्ट होता है कि वैश्विक जलवायु सहयोग तकनीकी और राजनयिक रूप से विकसित हुआ है, लेकिन जलवायु वित्त की कमी, विकसित और विकासशील देशों के बीच असमानता और स्वैच्छिक एनडीसी प्रतिबद्धताओं की कमी के कारण लक्ष्यों की प्राप्ति संदिग्ध है।

मुख्य शब्दावली: अंतरराष्ट्रीय कूटनीति, जलवायु परिवर्तन, पेरिस समझौता, एनडीसी, यूएनएफसीसीसी, COP, जलवायु वित्त, हरित ऊर्जा, वैश्विक सहयोग

**प्रस्तावना**

जलवायु परिवर्तन समकालीन युग की सबसे जटिल और बहुआयामी चुनौती के रूप में उभरा है। आईपीसीसी (जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल) की छठी आकलन रिपोर्ट (AR6, 2021-2023) के अनुसार, पृथ्वी की औसत सतह के तापमान में पूर्व-औद्योगिक स्तरों के सापेक्ष 1.1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है, और



यदि उत्सर्जन का वर्तमान प्रक्षेपवक्र बना रहता है, तो वर्ष 2040 तक इसके 1.5 डिग्री सेल्सियस की महत्वपूर्ण सीमा को पार करने का अनुमान है। इस स्थिति का सार यह है कि किसी एक राष्ट्र के पास इसे अलग-थलग करके संबोधित करने की क्षमता नहीं है। कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य ग्रीनहाउस गैसों वातावरण के भीतर राष्ट्रीय सीमाओं को पार कर जाती हैं; इस प्रकार, उनके शमन के लिए एक ठोस वैश्विक प्रयास अनिवार्य है। इस आवश्यकता ने पिछले तीन दशकों में जलवायु कूटनीति को एक महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय एजेंडा के रूप में उभरने के लिए प्रेरित किया है।

1992 में रियो डी जनेरियो में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास सम्मेलन (UNCED) से 2022 में शर्म अल शेख COP27 तक की प्रगति को राष्ट्रीय प्राथमिकताओं, शक्ति की गतिशीलता और जलवायु न्याय की मांग को विकसित करने की विशेषता है। यह शोध पत्र जटिलता की इन जटिल परतों को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। केनेथ वाल्ट्ज द्वारा प्रस्तुत 'संरचनात्मक यथार्थवाद' को ध्यान में रखते हुए, यह देखा जा सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के भीतर प्रत्येक राज्य सर्वोपरि शक्ति प्राप्त करने की इच्छा रखता है, और जलवायु समझौते अक्सर इस यथार्थवाद द्वारा थोपी गई सीमाओं के साथ संघर्ष का सामना करते हैं। समवर्ती रूप से, रॉबर्ट कोहेन और जोसेफ नी द्वारा व्यक्त 'परस्पर निर्भरता का सिद्धांत' का तर्क है कि साझा वैश्विक चुनौतियों से निपटने के लिए राज्यों के बीच सहयोग आवश्यक है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और अंतर्राष्ट्रीय जलवायु शासन

1992 में ब्राजील के रियो डी जनेरियो में आयोजित पृथ्वी शिखर सम्मेलन, जलवायु कूटनीति के विकास में एक महत्वपूर्ण क्षण का प्रतिनिधित्व करता है। इस सम्मेलन के दौरान, कुल 154 देशों ने जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) का समर्थन किया। यूएनएफसीसीसी का प्राथमिक उद्देश्य वातावरण में ग्रीनहाउस गैस सांद्रता को एक स्तर पर स्थिर करना था, जिससे जलवायु पर खतरनाक मानवजनित प्रभावों को रोका जा सके।



कन्वेंशन ने 'सामान्य लेकिन विभेदित जिम्मेदारी' (सीबीडीआर) के सिद्धांत को प्रख्यापित किया, जो स्वीकार करता है कि विकसित राष्ट्र, जिन्होंने उत्सर्जन में ऐतिहासिक रूप से अधिक योगदान दिया है, जलवायु संकट का सामना करने में अधिक दायित्व वहन करते हैं। यह अवधारणा समकालीन विमर्श में विकसित और विकासशील देशों के बीच महत्वपूर्ण विवाद का विषय बनी हुई है।

क्योटो प्रोटोकॉल को औपचारिक रूप से 1997 में जापान के क्योटो शहर में आयोजित पार्टियों के तीसरे सम्मेलन (COP3) के दौरान अपनाया गया था और बाद में यह 2005 में प्रभावी हो गया। इस प्रोटोकॉल ने उद्घाटन अंतर्राष्ट्रीय उपकरण का प्रतिनिधित्व किया, जिसने एनेक्स I देशों के रूप में वर्गीकृत विकसित देशों के लिए कानूनी रूप से लागू करने योग्य उत्सर्जन में कमी के दायित्वों को स्थापित किया।

क्योटो प्रोटोकॉल के अनुसार, विकसित देशों को 2008-2012 की अनुपालन अवधि के दौरान 1990 बेसलाइन के सापेक्ष ग्रीनहाउस गैस (GHG) उत्सर्जन में औसतन 5.2% की कमी हासिल करनी थी। फिर भी, इस समझौते की एक महत्वपूर्ण सीमा संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा गैर-अनुसमर्थन था, जो उस समय विश्व स्तर पर प्रमुख उत्सर्जक था। इसके अतिरिक्त, कनाडा औपचारिक रूप से 2011 में प्रोटोकॉल से हट गया।

2009 में डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन में आयोजित COP15 से बहुत आशा थी। लेकिन विश्व भर के नेताओं ने इसमें भाग लिया, यह सम्मेलन असफल रहा। "कोपेनहेगन एकाईड" नामक दस्तावेज़ पारित हुआ, जो कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं था और कोई ठोस कटौती लक्ष्य नहीं था और केवल 2 डिग्री सेल्सियस तापमान सीमा बताता था। यह सम्मेलन असफल रहा क्योंकि जलवायु वार्ताओं में राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी एक महत्वपूर्ण बाधा है।



**प्रमुख जलवायु समझौतों का तुलनात्मक विवरण-**

(तालिका 1: प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय जलवायु समझौते — 1997 से 2022)

समझौते का नाम	वर्ष	भाग लेने वाले देश	मुख्य लक्ष्य	सीमाएँ
क्योटो प्रोटोकॉल	1997 (लागू 2005)	192 देश	GHG में 5.2% कटौती (1990 के स्तर से)	अमेरिका ने हस्ताक्षर नहीं किए
कोपेनहेगन समझौता	2009	120+ देश	तापमान वृद्धि 2°C तक सीमित करना	कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं
पेरिस समझौता	2015 (लागू 2016)	196 देश	1.5–2°C तापमान सीमा, एनडीसी लक्ष्य	NDC स्वैच्छिक, अपर्याप्त प्रतिबद्धता
ग्लासगो जलवायु संधि	2021 (COP26)	197 देश	कोयला उपयोग में कमी, 2030 लक्ष्य	विकासशील देशों की चिंताएँ
शर्म अल-शेख (COP27)	2022	190+ देश	लॉस एंड डैमेज फंड की स्थापना	वित्त पोषण का अभाव

स्रोत: यूएनएफसीसीसी टीटी कलेक्शन, 2023; आईपीसीसी एआर6 समरी फॉर पॉलिसीमेकर्स, 2023



पेरिस अनुबंध (2015): जलवायु कूटनीति में नवीनता

पेरिस समझौता दिसंबर 2015 में सीओपी 21 द्वारा स्वीकृत किया गया, जो उस समय तक जलवायु मुद्दों पर सबसे व्यापक और लगभग विश्वव्यापी समझौता था। निकोलस स्टर्न (2015) ने इसे 'एक नए जलवायु अर्थव्यवस्था की नींव' कहा। इस समझौते का उद्देश्य है कि वैश्विक औसत तापमान में वृद्धि 2°C से नीचे बनी रहे, और वरीयता से 1.5°C तक हो। यह समझौता देशों को स्वैच्छिक राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (एनडीसी) प्रस्तुत करने पर भी बाध्य करता है, जिनकी समीक्षा और अद्यतन हर पांच साल में की जाएगी। विकसित देशों को 2020 से प्रति वर्ष 100 अरब डॉलर की जलवायु वित्तपोषण प्रदान करने का दायित्व है। इसके अतिरिक्त, 'रेटैच मेकानिज्म' का उद्देश्य एनडीसी की महत्वाकांक्षा को लगातार अधिक चुनौतीपूर्ण बनाने का है।

भारत ने पेरिस समझौते में कुछ प्रमुख प्रतिबद्धताएँ की हैं। भारतीय सरकार ने अपने NDC में कहा कि 2030 तक वे जीडीपी उत्सर्जन को 33-35% तक कम कर देंगे और एक लक्ष्य निर्धारित किया कि 2030 तक 40% बिजली नवीकरणीय स्रोतों से आएगी। उन्होंने 2.5-3 अरब टन के बीच कार्बन सिंक बनाने का भी प्रण लिया। अंत में, 2022 के संशोधित एनडीसी में, भारत ने 2070 तक नेट-शून्य उत्सर्जन हासिल करने का लक्ष्य निर्धारित किया। भारत का तर्क है कि चूंकि अधिकांश प्रदूषण विकसित देशों से आया है, इसलिए उन्हें ही समाधान के वित्तपोषण का कार्य करना चाहिए। यह रुख उस तकनीक पर भी लागू होता है जिसकी जरूरत समस्या के समाधान के लिए है। यह दृष्टिकोण क्लाइमेट जस्टिस थ्योरी से भी मेल खाता है, जिसे श्यू (1992) और कैनी (2010) द्वारा समर्थित किया गया है। अमेरिका की जलवायु नीति में राजनीतिक बदलाव ने वैश्विक जलवायु कूटनीति को बहुत प्रभावित किया है। 2016 में राष्ट्रपति बराक ओबामा ने पेरिस समझौते की घोषणा की, लेकिन 2017 में डोनाल्ड ट्रम्प ने इसे वापस ले लिया। 2021 में जो बाइडेन ने फिर से अमेरिका को इस समझौते में शामिल किया और \$11.4 बिलियन की जलवायु वित्त प्रतिबद्धता दी। यह "रिवर्सिबिलिटी



की समस्या", या बदलाव की समस्या, जलवायु समझौतों की एक महत्वपूर्ण कमजोरी को उजागर करती है—  
जब देशों की सरकारें बदलती हैं, पूर्व की प्रतिबद्धताएँ खतरे में पड़ जाती हैं।

विश्वव्यापी उत्सर्जन और देशों की भूमिका

(तालिका 2: प्रमुख देशों का CO<sub>2</sub> उत्सर्जन, वैश्विक हिस्सेदारी एवं एनडीसी प्रतिबद्धताएँ, 2023)

देश	CO <sub>2</sub> उत्सर्जन (Gt, 2023)	वैश्विक हिस्सेदारी (%)	NDC प्रतिबद्धता	जलवायु वित्त योगदान
चीन	12.6 Gt	32.9%	2060 तक कार्बन-तटस्थ	सीमित
अमेरिका	5.0 Gt	13.1%	2030 तक 50- 52% कटौती	\$11.4 बिलियन/वर्ष
यूरोपीय संघ	2.6 Gt	6.8%	2030 तक 55% कटौती	\$25+ बिलियन
भारत	2.8 Gt	7.3%	2070 तक नेट- जीरो	जलवायु वित्त का दावेदार
रूस	1.7 Gt	4.4%	2060 तक कार्बन-तटस्थ	न्यूनतम

स्रोत: ग्लोबल कार्बन प्रोजेक्ट, 2023; क्लाइमेट एक्शन ट्रैकर, 2023; आईईए वर्ल्ड एनर्जी आउटलुक 2023



उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि चीन वैश्विक उत्सर्जन में 32.9% की भागीदारी के साथ सबसे बड़ा उत्सर्जक है, जबकि यूरोपीय संघ ने सबसे बड़े एनडीसी लक्ष्य निर्धारित किए हैं। भारत का ध्यान आर्थिक विकास पर है, लेकिन वह विकासशील देशों में सबसे सक्रिय जलवायु अभिकर्ता बन गया है।

वैश्विक जलवायु वार्ताओं में सबसे बड़ा विवाद 'वर्तमान उत्सर्जन' और 'ऐतिहासिक उत्सर्जन' के बीच है। रौपाच एट अल. (2007) के अनुसार, 1850 से 2002 के बीच विकसित देशों (अमेरिका, यूरोपीय संघ, रूस) का CO<sub>2</sub> उत्सर्जन 75% से अधिक था। इसके विपरीत, भारत और चीन आज तेजी से विकसित हो रहे हैं। यह असमानता ने शब्द "जलवायु ऋण" का जन्म दिया। श्रीनिवासन एट अल. (2008) ने एक अध्ययन में पाया कि विकसित देशों पर जलवायु क्षतिपूर्ति का बोझ कहीं अधिक है यदि कार्बन उत्सर्जन के ऐतिहासिक बोझ को ध्यान में रखा जाए।

मुख्य जलवायु सहयोग मुद्दे

(तालिका 3: जलवायु सहयोग की चुनौतियाँ और समाधान के प्रयास)

चुनौती का क्षेत्र	विवरण	समाधान के प्रयास
राष्ट्रीय हितों का टकराव	तेल-निर्भर देश जीवाश्म ईंधन छोड़ने में हिचकिचाते हैं	न्यायसंगत संक्रमण निधि
वित्त की कमी	विकासशील देशों को \$100 बिलियन/वर्ष का वादा पूरा नहीं	एनसीक्यूजी: 2024 में \$300 बिलियन लक्ष्य निर्धारित
तकनीकी असमानता	हरित तकनीक का असमान वितरण	आईपीसीसी समर्थित प्रौद्योगिकी हस्तांतरण



चुनौती का क्षेत्र	विवरण	समाधान के प्रयास
कानूनी बाध्यता का अभाव	एनडीसी स्वैच्छिक, कोई दंड तंत्र नहीं	पारदर्शिता ढाँचा (पेरिस अनुच्छेद 13)
जलवायु शरणार्थी संकट	2050 तक 216 मिलियन विस्थापित होने की आशंका	यूएनएचसीआर-क्लाइमेट रेज़िलिएंस इनिशिएटिव

स्रोत: ओईसीडी क्लाइमेट फाइनेंस रिपोर्ट 2023; वर्ल्ड बैंक क्लाइमेट एक्शन प्लान 2021-2025;

यूएनएचसीआर, 2021

राष्ट्र-राज्यों के सर्वोच्च हितों और जलवायु लक्ष्यों का संघर्ष जलवायु समझौतों में सबसे बड़ी बाधा है। तेल-निर्भर अर्थव्यवस्थाओं के कारण सऊदी अरब, रूस और खाड़ी देश जीवाश्म ईंधन को शीघ्र छोड़ने में हिचकिचाते हैं। इन देशों ने COP27 (2022) में प्राकृतिक गैस को 'संक्रमणकालीन ईंधन' मानने का दबाव डाला। साथ ही, राष्ट्रीय सरकारों को जलवायु प्रतिबद्धताओं को पूरा करना कठिन होता है क्योंकि घरेलू राजनीतिक दबाव, जैसे कृषि लॉबी द्वारा उर्वरक प्रतिबंधों का विरोध और श्रमिक संघों की कोयला उद्योग बंद करने की माँग। पटनम (1988) के "दो-स्तरीय खेल" सिद्धांत के अनुसार, वार्ताकार दोनों मोर्चों पर काम करते हैं: घरेलू और वैश्विक।

2009 के कोपेनहेगन समझौते में विकसित देशों ने प्रति वर्ष विकासशील देशों को \$100 बिलियन जलवायु वित्त देने का वादा किया था। किंतु 2023 की ओईसीडी रिपोर्ट के अनुसार, 2021 में केवल \$89.6 बिलियन जुटाए गए। ऋण और अनुदान का अनुपात भी विवादास्पद है। ऑक्सफैम इंटरनेशनल (2023) की रिपोर्ट के अनुसार, इस "जलवायु वित्त" का असली अनुदान केवल 21 से 24 बिलियन डॉलर था, जो विकासशील देशों को वापस चुकाने के लिए अतिरिक्त ऋण के रूप में था। इस स्थिति में जलवायु वित्त में "वास्तविकता और



दावे के बीच खाई" है। COP28 (दुबई, 2023) में विकासशील देशों ने एक ट्रिलियन डॉलर की माँग कर रहे थे, लेकिन उस समय तक \$300 बिलियन प्रति वर्ष का नया लक्ष्य निर्धारित करने के लिए बातचीत हुई। विकसित देशों ने रित ऊर्जा तकनीकों (जैसे सौर पैनल, पवन टर्बाइन, इलेक्ट्रिक वाहन और हाइड्रोजन ऊर्जा) का विकास और पेटेंट किया है। पटेल और पवित (1994) ने जलवायु तकनीक के लिए तकनीकी संचय का विचार प्रस्तुत किया। इरिना (2022) के अनुसार, 2021 में नवीकरणीय ऊर्जा में विश्वव्यापी निवेश का 80% विकसित देशों और चीन में था। अफ्रीका जैसे महाद्वीप, जो जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित हैं, निवेश की माँग कर रहे हैं।

क्लाइमेट एक्शन ट्रैकर (2023) के विश्लेषण के अनुसार, यदि सभी देश अपने वर्तमान NDC लक्ष्यों को भी पूरी तरह लागू करें, तो 2100 तक वैश्विक तापमान 2.4-2.7°C तक बढ़ जाएगा, जो पेरिस के 1.5°C लक्ष्य से कहीं अधिक होगा। पेरिस समझौते में एनडीसी स्वैच्छिक हैं और किसी देश के लक्ष्य को नहीं पूरा करने पर अंतर्राष्ट्रीय दंड नहीं लगाया जाता। पेरिस समझौते की सबसे बड़ी आलोचना का विषय है 'अनुपालन की कमजोरी'। विक्टर (2011) ने अपनी पुस्तक "ग्लोबल वार्मिंग गिडलॉक" में यह तर्क दिया कि बड़े बहुपक्षीय समझौते अक्सर सबसे निम्न सामान्य हर पर आते हैं (सबसे निम्न सामान्य मानक)।

BASIC (ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका, भारत और चीन) समूह ने जलवायु सम्मेलनों में महत्वपूर्ण सहयोग किया है। बेसिक (BASIC) देश सीबीडीआर सिद्धांत पर जोर देते हुए विकसित देशों से पहले अपनी ऐतिहासिक कर्तव्यों को पूरा करें। जलवायु सम्मेलनों में G77 (134 विकासशील देशों का समूह) और एओसिस (एलायंस ऑफ स्मॉल आइलैंड स्टेट्स—छोटे द्वीपीय देश) भी महत्वपूर्ण हैं। एओसिस का अस्तित्व जलवायु परिवर्तन से संबंधित है क्योंकि समुद्र-स्तर वृद्धि से उनका डूबने का खतरा है।

हालिया परिवर्तन: COP26 और COP28



स्कॉटलैंड के ग्लासगो में COP26, या ग्लासगो जलवायु संधि, पारित हुई। इसमें पहली बार कोयले के उपयोग में "चरणबद्ध कमी" (फेस-डाउन नहीं फेस-आउट) का उल्लेख था। भारत और चीन ने " फेस-आउट) के बजाय "फेस-डाउन " का अनुरोध किया। 100 से अधिक देशों ने इस सम्मेलन में 'ग्लोबल मीथेन प्लेज' पर हस्ताक्षर किए, जो 2030 तक मीथेन उत्सर्जन को 30% कम करेगा। साथ ही 140 देशों ने 'ग्लासगो लीडर्स डिक्लेरेेशन ऑन फॉरेस्ट्स एंड लैंड यूज' पर सहमति जताई, जो वनों की कटाई को रोकेगा।

मिस्र के शर्म अल-शेख में COP27 की सबसे बड़ी उपलब्धि थी, जिसमें 'लॉस एंड डैमेज फंड' की स्थापना की घोषणा की गई थी। विकसित देशों ने स्वीकार किया कि जलवायु परिवर्तन ने कमज़ोर और विकासशील देशों को जो नुकसान पहुँचाया है, उसके लिए क्षतिपूर्ति दी जाएगी। हालाँकि, इस फंड के लिए वित्त पोषण का स्रोत, राशि और वितरण प्रणाली अभी भी चर्चा में हैं। रॉबिंसन (2023) का अनुमान है कि 2030 तक लॉस एंड डैमेज का वार्षिक खर्च \$400 बिलियन तक पहुँच सकता है।

संयुक्त अरब अमीरात के दुबई में COP28 के अंतिम संधि पत्र में पहली बार जीवाश्म ईंधन से दूर जाने का स्पष्ट उल्लेख हुआ। 2030 तक नवीकरणीय ऊर्जा दक्षता और क्षमता को तीन गुना करने का लक्ष्य रखा गया है। COP28 ने जीएसटी को पहली बार लागू किया— यह पेरिस समझौते का पालन करने की जाँच की प्रक्रिया है। इसके परिणाम महत्वपूर्ण थे: पेरिस लक्ष्यों से वर्तमान प्रयास काफी पीछे हैं।

### भारत का विचार जलवायु और विकास का संतुलन

भारत की जलवायु कूटनीति में एक गंभीर संघर्ष देखने को मिलता है: आर्थिक विकास और ऊर्जा सुरक्षा की जरूरत, दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन के प्रति वैश्विक जिम्मेदारी। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने COP26 में 'पंचामृत' घोषणा की— 2030 तक 500 GW नवीकरणीय ऊर्जा, 50% नवीकरणीय स्रोतों से बिजली, 45% उत्सर्जन तीव्रता में कमी, 1 बिलियन टन कार्बन सिंक और 2070 तक नेट-जीरो उत्सर्जन। भारत ने विकासशील देशों में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने की एक बड़ी पहल, 'अंतरराष्ट्रीय सौर अलायंस' (ISA)



की स्थापना में नेतृत्व किया। यह भारत की 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' योजना का एक हिस्सा है। MoEFCC (मिनिस्ट्री ऑफ एनवायरनमेंट, फॉरेस्ट्स एंड क्लाइमेट चेंज) की 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत अपने एनडीसी लक्ष्यों को समय पर प्राप्त कर रहा है। भारत की नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता 2023 तक 179 GW से अधिक हो जाएगी।

**सैद्धांतिक दृष्टिकोण और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण**

मियर्सहाइमर (2001) जैसे अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के यथार्थवादी सिद्धांतकार कहते हैं कि राज्यों का राष्ट्रीय हित सबसे पहले होता है, इसलिए जलवायु जैसे सामूहिक मुद्दों पर प्रभावी अंतर्राष्ट्रीय सहयोग संभव नहीं है। "द ट्रेजेडी ऑफ द कॉमन्स" (हार्डिन, 1968) का बहाना यहाँ उपयुक्त है। विपरीत, उदारवादी संस्थावादी कहते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ और नियम-आधारित व्यवस्था राज्यों को सहयोग की ओर प्रेरित कर सकती हैं (केओहेन, 1984)। इसी विचार को पेरिस समझौते और संयुक्त राष्ट्र महासभा की सफलता ने भी साबित किया है।

अलेक्जेंडर वेंड्ट (1999) और मार्था फिनेमोर की रचनावादी दृष्टिकोण (कंस्ट्रक्टिविज़्म) के अनुसार, "जलवायु जिम्मेदारी" एक बदलता वैश्विक मानदंड (नॉर्म) है। अब जलवायु परिवर्तन को केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से नहीं देखा जाता, बल्कि सुरक्षा, मानवाधिकार और विकास के दृष्टिकोण से भी देखा जाता है। हैबरमास की 'संवादात्मक तर्क' (कम्यूनिकेटिव रैशनलिटी) की अवधारणा के आधार पर, जलवायु वार्ताएँ एक 'वैश्विक जन-विमर्श' (ग्लोबल पब्लिक डिलिबरेशन) में बदल गई हैं, जिसमें स्वदेशी समुदाय, नागरिक समाज और युवा आंदोलन (ग्रेटा थनबर्ग द्वारा प्रेरित फ्राइडेज़ फॉर फ्यूचर) भी भाग ले रहे हैं।

**नतीजे और नीतिगत सुझाव**

इस अध्ययन के विश्लेषण से निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं:



पहले, 1992 के यूएनएफसीसीसी से 2023 के COP28 तक जलवायु कूटनीति का निर्माण हुआ है, लेकिन पेरिस लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वर्तमान प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। वैश्विक तापमान 2.4°C तक बढ़ने के लिए अभी भी खतरा है।

द्वितीय, सीबीडीआर सिद्धांत के बावजूद जलवायु वित्त की कमी और तकनीकी असमानता ने विकासशील देशों को बड़ी चुनौती दी है। \$100 बिलियन का वादा अभी भी पूरा नहीं हुआ है।

तृतीय पेरिस समझौते की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि यह स्वैच्छिक है और कानून से बंधित नहीं है। अनुपालन प्रणाली को मजबूत करना आवश्यक है।

चतुर्थ, भारत ने जलवायु कूटनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और अपनी एनडीसी प्रतिबद्धताओं को पूरा करने में विकास और जलवायु के बीच संतुलन बनाया है।

निम्नलिखित नीतिगत सुझावों का उद्देश्य जलवायु सहयोग को अधिक प्रभावशाली बनाना है: जलवायु वित्त में अनुदान बढ़ाकर विकसित देशों को ऋण पर निर्भरता कम करनी होगी। अंतरराष्ट्रीय कार्बन मूल्य निर्धारण प्रणाली बनाना आवश्यक है। पेटेंट बाधाओं को कम करने के लिए, हरित तकनीक का प्रसार एक "पब्लिक गूड" माना जाएगा। 1.5°C लक्ष्य के लिए यूएनएफसीसीसी के भीतर एक नया अनुपालन प्रणाली बनाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. आईपीसीसी (2023). *क्लाइमेट चेंज 2023, सिंथेसिस रिपोर्ट*, कंटीब्यूशन ऑफ वर्किंग ग्रुप्स I, II एंड III टू द सिक्स्थ असेसमेंट रिपोर्ट ऑफ द इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज, जिनेवा, आईपीसीसी
2. स्टर्न, एन. (2007). *द इकोनॉमिक्स ऑफ क्लाइमेट चेंज, द स्टर्न रिव्यू*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस



3. विकटर, डी.जी. (2011). *ग्लोबल वार्मिंग ग्रिडलॉक, क्रिएटिंग मोर इफेक्टिव स्ट्रेटेजीज फॉर प्रोटेक्टिंग द प्लैनेट*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस
4. कियोहाने, आर.ओ. एवं नाए, जे.एस. (1977). *पावर एंड इंटरडिपेंडेंस, वर्ल्ड पॉलिटिक्स इन ट्रांजिशन*, लिटल, ब्राउन एंड कंपनी
5. यूएनएफसीसीसी (2015). *पेरिस एग्रीमेंट, यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज, रिट्रीव्ड फ्रॉम*, [https://unfccc.int/sites/default/files/english\\_paris\\_agreement.pdf](https://unfccc.int/sites/default/files/english_paris_agreement.pdf)
6. ऑक्सफैम इंटरनेशनल (2023). *क्लाइमेट फाइनेंस शैडो रिपोर्ट 2023*, ऑक्सफोर्ड, ऑक्सफैम
7. ओईसीडी (2023). *क्लाइमेट फाइनेंस प्रोवाइडेड एंड मोबिलाइज्ड बाय डेवलपड कंट्रीज़ इन 2016–2021*, ओईसीडी पब्लिशिंग, पेरिस
8. मिनिस्ट्री ऑफ एनवायरनमेंट, फॉरेस्ट एंड क्लाइमेट चेंज (MoEFCC), गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (2023). *इंडियाज़ नेशनल्ली डिटरमाइंड कॉन्ट्रिब्यूशन्स, प्रोग्रेस रिपोर्ट*, नई दिल्ली
9. क्लाइमेट एक्शन ट्रैकर (2023). *ग्लोबल अपडेट, पेरिस एग्रीमेंट टर्निंग पॉइंट*  
<https://climateactiontracker.org>
10. आईईए (2023). *वर्ल्ड एनर्जी आउटलुक 2023*, इंटरनेशनल एनर्जी एजेंसी, पेरिस
11. ग्लोबल कार्बन प्रोजेक्ट (2023). *ग्लोबल कार्बन बजट 2023*, साइंस, DOI: 10.5194/essd-15-5301-2023.
12. पुटनम, आर.डी. (1988). *डिप्लोमेसी एंड डोमेस्टिक पॉलिटिक्स, द लॉजिक ऑफ टू-लेवल गेम्स*, इंटरनेशनल ऑर्गनाइजेशन, 42(3), 427–460
13. वेंड्ट, ए. (1999). *सोशल थ्योरी ऑफ इंटरनेशनल पॉलिटिक्स*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस
14. हार्डिन, जी. (1968). *द ट्रैजेडी ऑफ द कॉमन्स*, साइंस, 162(3859), 1243–1248



15. आईरेना (2022). *वर्ल्ड एनर्जी ट्रान्जिशनस आउटलुक 2022: 1.5°C पाथवे*, अबू धाबी, इंटरनेशनल रिन्यूएबल एनर्जी एजेंसी
16. शर्मा, रामविलास (2019). *अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण कूटनीति*. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, भारत सरकार।
17. राउपाच, एम.आर., एवं अन्य (2007). *ग्लोबल एंड रीजनल ड्राइवर्स ऑफ एक्सेलेरेटिंग CO<sub>2</sub> एमिशनस*, प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज़, 104(24), 10288–10293

